

डॉ.धीरेन्द्र झा*

जल के दिव्य रूपों

तथा अनेक भेदों

का वर्णन ऋग्वेट से ही प्रारम्भ हो जाता है। वेदों में एक ओर दिव्य. आन्तरिक्ष और पार्थिव के रूप में 3 भेद तथा अम्भ, मरीची, भर और आप के रूप में 4 भेद किये गये हैं तो दूसरी ओर नदियों के भोगोलिक स्वरूप का भी वर्ण हमें मिलता है। इस प्रकार वैदिक साहित्य में साध्य एवं साधन- दोनों के रूप में जलतत्त्व पर विमर्श हुआ है।

वैदिक साहित्य में जल-विमर्श

वेद अनन्त ज्ञान-विज्ञान की निधि है। मनु ने कहा है- **"भूतं भवद्भविष्यञ्च सर्वं** वेदात् प्रसिद्ध्यित।" अर्थात् वैदिक विज्ञान सभी कालों व समस्त परिस्थितियों में अनुकरणीय है।

वेदों में अनेकानेक वैज्ञानिक विषयों का विस्तृत विवेचन किया गया है यथा-जलतत्त्व, अग्नितत्त्व, वायुतत्त्व, ब्रह्मतत्त्व, पृथिव्यादिलोकभ्रमण-विज्ञान, आकर्षण-विज्ञान प्रकाश्य -प्रकाशक विज्ञान, सृष्टि विज्ञान, गणित विज्ञान, नक्षत्रविज्ञान, नौका-विमानादि विज्ञान सौर विज्ञान मनोविज्ञान, ग्रहविज्ञान और औषधि विज्ञानादि वेद की सृष्टि विज्ञान भी कहा जाता है, क्योंकि मानव सभ्यता के इस प्रथम ग्रन्थ ऋग्वेद में सृष्टि के समग्र तत्त्व व रहस्यों का विशद विवेचन किया गया है।

वैदिक ऋषियों ने इस संपूर्ण ब्रह्माण्ड को "सर्वमापोमयं जगत्" कहकर संपूर्ण सृष्टि का कारणभूत जल को ही माना है। सृष्टि की उत्पति जल से ही हुई है। सृष्टिकर्ता परमात्मा जब एकाकी था, तब उसने विचार किया- "एकोऽहं बहु स्याम।" अर्थात् में एक से अनेक हो जाऊँ। शतपथ ब्राह्मण के 6ठे अध्याय में सृष्टि-प्रक्रिया के क्रम में बताया गया है-

"सोऽकामयत भूय एव स्यात्प्रजायेतेति। सोऽश्राम्यत स तपोऽतप्यत। सः श्रान्तस्तेपानः फेनमसृजत। मृदम् शुष्काऽप-मूसिकतं शर्करामश्मानमयो हिरण्यमोषधिवनस्पत्यसृजत। तेने मां पृथिवीं प्राच्छादयत॥13॥"²

अर्थात् समस्त सृष्टि में सर्वप्रथम जल का आविर्भाव हुआ शतपथ ब्राह्मण के ग्यारहवें काण्ड में कहा गया है कि "आपो वा इदमग्रे सिललमेवास॥" अर्थात् जगत्कर्ता ने सृष्टि की इच्छा करते हुए सबसे पहले जल की ही रचना की। इसका विस्तृत निरुपण करते हुए महामहोपाध्याय पं. मध्सुदन ओझा ने अपने ग्रन्थ 'अभ्भोवाद' में लिखा है-

अद्भ्यो हि सृष्टिः प्रबभूव सर्वा सर्वं यदाप्नोत् तत आप एताः। यतोऽवृणोत्सर्वमतश्च तद् वारतो वदन्त्यावरणात् प्रसृष्टिम्॥2॥⁴

वायुपुराण में भी बताया गया है कि विविध प्रजाओं की सृष्टि के लिए भगवान् ने जल की रचना की-

- 1 मनुस्मृति, 12.97
- 2 शतपथ ब्राह्मण 6. 1.1.13, सत्यव्रत शर्मा सामश्रमी (सम्पादक), भाग-6, 1908, कोलकाता, पृष्ठ सं. 5
- 3 (श. ब्रा. 11.1.6.1)
- 4 पं. मधुसूदन ओझा सीरीज-9 म.म. मधुसूदन ओझा, अम्भोवाद, डॉ. दयानन्द भार्गव(सम्पादक), पं. मधुसूदन ओझा प्रकोष्ठ, संस्कृत विभाग जयनारायणव्यास विश्वविद्यालय जोधपुर, 2002 ई. पृ. 56.

ततः स्वयम्भूर्भगवान् सिसृक्षुर्विविधाः प्रजाः।

अप एव संसर्जादौ तासु वीर्यमवासृजत्॥35॥⁵

मनुस्मृति में मनु ने भी इसी क्रम को बताया है यथा-

सोऽभिध्याय शरीरात्स्वात्सिसृक्षुर्विविधाः प्रजाः।

अप एव ससर्जादौ तासु वीर्यं अवासूजत्॥1.8॥6

गोपथ-ब्राह्मण के मतानुसार- जब परमात्मा ने सृष्टि का चिंतन करें इसकी पूर्ति के लिए श्रम और तप किया, जिसके कारण उसके ललाट से स्वेद (पसीना की धारा का प्रवाह हुआ।

अस्य श्रान्तस्य तप्तस्य सन्तप्तस्य सर्वेभ्यो रोमगर्तेभ्यः पृथक् स्वेदधारा: प्रास्यन्दत।"

ऐतरेय ब्राह्मण में बताया गया है कि आत्मा रूप मूल तत्त्व के स्वेद से निर्गत जो जल उत्पन्न हुआ, वह चार अवस्थाओं मैं चार नामों से चारों ही लोकों में व्याप्त है। उनके नाम है- अम्भ, मरीची, भर और आए। इनमें अम्भ वह जल है जो. सूर्यमण्डल से भी ऊर्ध्व प्रदेशों- मह:, जन:, तप:, इत्यादि लोकों में परिव्याप्त है। अन्तरिक्ष में जो जल व्याप्त है, वह मरीचि रूप है तथा पृथ्वी के निर्माण व उत्पादन में जो जल अग्रसर होता है वह भर है, और पृथ्वी पर प्रवाहित होनेवाला या पृथ्वी को खोदने पर निकलने वाला जल आप: नाम से प्रसिद्ध है। वेदों में जल की अनेक अवस्थाओं का वर्णन हुआ है यथा

ॐ या दिव्या आप: पयसा सम्बभूवुर्या आन्तरिक्षा उत पार्थिवीया:। हिरण्यवर्णा यज्ञियास्तान आप: शिवा: शंस्योना: सुहवा भवन्तु॥

अर्थात् जो जल अपने सारभूत रस से युक्त है और जो अन्तरिक्ष तथा भूमि पर अवस्थित जल है, वह सुवर्म के समान वर्णवाला पवित्र जल यज्ञ के उपयुक्त है। वह जल हमारे लिए कल्याणकारी एवं सुख देनेवाला बनें। इस मन्त्र में तीन प्रकार के जल का वर्णन हुआ है- एक दिव्य अर्थात् द्युलोक (सूर्यलोकस्थ) का दूसरा अन्तरिक्षस्थ का और तीसरा भूमि पर अवस्थित जल का। ऋग्वेद में सप्तम मंडल के 49 सूक्त में ऋषि वसिष्ठ मैत्रावरुणि ने पार्थिव जल (भूमिसम्बन्धी) के तीन विभाग बताये है"

या आपो दिव्या उत वा स्रवन्ति खनित्रिमा उत वा याः स्वयंजाः। समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु॥२॥१

जो दिव्य जल आकाश से (वृष्टि के द्वारा) प्राप्त होते हैं, जो निदयों में सदा गमनशील हैं, जिन्हें खोदकर कूपादि से निकाला जाता है और जो स्वयं स्रोतों के द्वारा प्रवाहित होकर समुद्र की ओर जाते हैं, वे दिव्यतायुक्त जल हमारी रक्षा करें। ये सारे ही अभिस्थ जल के ही अवान्तर विभाग है।

ब्राह्मण, उपनिषद, मनुस्मृति, पुराणादि में सृष्टि की उत्पत्ति के आरंभ में ही अप् की उत्पत्ति कही गयी है। अप् नाम यद्यपि जल का ही है, किन्तु वहाँ यह स्थल जल नहीं, अपितु रस रुप द्रव्य पदार्थ वहाँ अप् या अम्भः शब्द का अर्थ है। यह अप् ब्रह्माण्ड में सर्वत्र व्याप्त है। वेदमन्त्रों में बताया गया है कि चन्द्रमा अप् के भीतर होकर दौड़ता है। सूर्यलोक में तथा सूर्य में भी अप् विद्यमान है। सूर्य और अग्नि अप् में ही पैदा होते हैं। जब भगवान् सूर्य उदयाचल में आते हैं तब उनकी किरणों के कारण अप् (जल) अपना स्थान छोड़कर दूर हट जाता है, किन्तु जब जिस जिस प्रदेश में सूर्य की किरणों मन्द हो जाती है वहाँ वह अप् इकठा हो जाता है और घनीभूत होकर स्थूल जल के रूप बरस जाता है। वैदिक ऋषियों को समुद्र, नदी व

5 (हरिवंश, 1.1.35)

6 (मनुस्मृति, 1.18)

^{7 (}गोपथ ब्राह्मण 1.2, जीवानन्द विद्यासागर(सम्पादक), 1891, कोलकाता, पृ. 1

⁸ गरुड पुराण, आचारकाण्ड, 218.9 में वैदिकमन्त्र के रूप में उद्धृत।

⁹ ऋग्वेद, 7.49.2

पुष्करिणयों से अत्यन्त ही लगाव था। इसी कारण ऋषियों के आश्रम और बस्तियाँ निदयों के किनारे ही विकसित हुए। ऋग्वेद में सर्वत्र जल को चार सूक्तों में आपो देवता कहकर संबोधित किया गया है। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के तेईसवें सूक्त, जिसके द्रष्टा मेधातिथि काण्व हैं, इसके 16-23वें मन्त्रों में जल की स्तुति की गयी है। इसी के सप्तम मण्डल के 47वें तथा 49वें सूक्त में मन्त्रद्रष्टा ऋषि विसष्ठ मैत्रावरुणि ने 'आपो' देवरूप जल की स्तुति की है। यहाँ 49वें सूक्त में समुद्र को जलाशयों में ज्येष्ठ माना गया है। यथा-

समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात्पुनाना यन्त्यनिविशमानाः। इन्द्रो या वज्री वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु॥1॥¹⁰

समुद्र जिनमें ज्येष्ठ है, वे जल प्रवाह, सदा अन्तरिक्ष से आनेवाले है। इन्द्रदेव ने जिनका मार्ग प्रशस्त किया है, वे जलदेव हमारी रक्षा करे।

ऋग्वेद में ही अनेक समुद्रों का विवरण पाया जाता है। ऋग्वेद (3.33) के द्वितीय व तृतीय मन्त्रों के अनुसार शुतुद्रि (सतलुज) और विपाश (व्यास) नाम की दो निदयाँ रिथयों की तरह समुद्र में गिरती हैं। यह पंजाब से दिक्षण का राजपूताना समृद्ध था जो आरावली पर्वत के दिक्षण के दिक्षण और पूर्व भागों तक फैला हुआ था। आज भी राजपूताने के गर्भ में खारे जल की झीलें (साँभर) और नमक की तहें इस बात की द्योतक हैं कि किसी समय इस प्रदेश को समुद्र की लहरें प्लावित करती थीं।

ऋग्वेद के 10वें मण्डल के 36वें सूक्त के मन्त्र से ज्ञात होता है कि पंजाब के पूर्व और पश्चिम में दो समुद्र विद्यमान थे। वातस्याश्चो वायो: सखा यो देवेषितो मुनि:। उभा समुद्रावाक्षति यश्च पूर्व उतापर:।¹¹

अर्थात् मुनि वायुमार्ग से घूमने के लिए अश्वरूप हैं। वे वायु के सहचर हैं। देवता उन्हें पाने की इच्छा करते हैं। वह पूर्व और पश्चिम के दोनों समुद्रों में निवास करते हैं।

ऋग्वेद के दो अन्य मन्त्रों (9. 33.6) और 10. 47.2) में चार समुद्रों का भी उल्लेख पाया जाता है। यथा-

रायः समुद्राँश्चतुरोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः।आ पवस्व सहस्रिणः॥६॥12

अर्थात् सोम धन सम्बन्धी चारों समुद्रों को चारों दिशाओं से हमारे पास ले आओं और असीम अभिलाषाओं को भी ले आओ। यहाँ चारों समुद्रों का अर्थ है- चारों समुद्रों से युक्त भूखण्ड के स्वामित्व का।

द्वितीय मन्त्र है-

स्वायुधं स्ववसं सुनीथं चतुःसमुद्रं धरुणं रयीणाम्। चर्कृत्यं शंस्यं भूरिवारमस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः॥२॥¹³

अर्थात् है इन्द्र तुम्हें हम शोभन अस्त्र और शोभन रक्षणकर्ता, सुन्दर नेत्रवाला, चारों समुद्रों को जल से परिपूर्ण करनेवाला, धनधारक बारबार- स्तुत्य और दुखों का निवारक जानते है। तुम हमें विलक्षण धन दो। इस प्रकार समस्त जल शक्ति व संसाधनों पर वैदिक आर्यों का एकाधिकार था।¹⁴

वैदिक आर्यलोग निदयों के बड़े भक्त थे। वे निदयों के तटों पर रहना बहुत पसन्द करते थे। ऋग्वेद में अनेकानेक निदयों का विवरण आया है।

ऋग्वेद में ''सप्त सिन्धवः'' और ''सप्त स्रवतः'' शब्द कई बार आये है जिसका अर्थ है- सात निदयाँ।

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।

असिक्न्या मरुद्वधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया॥5॥15

वेदमन्त्रों में भी मन वाणी और शरीर के पापों को क्षय करने की इस दिव्यजल से प्रार्थना की गयी है इदमाप: प्र वहत यत्किं च दुरितं मिय। यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेप उतानृतम्॥22॥¹⁶ महर्षि वाल्मीकि के गंगा स्तोत्र में एक ही श्लोक के द्वारा गंगा तत्त्व का स्फुट वर्णन किया गया है।

ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हरशिरसि जटाविल्लमुल्लासयन्ती स्वर्लोकादापतन्ती कनकगिरिगुहागण्डशैलात्स्खलन्ती। क्षोणीपृष्ठे लुठन्ती दुरितचयचमू निर्भरं भर्त्सयन्ती पाथोधिं पूरयन्ती सुरनगरसिरत्पावनी नः पुनातु॥३॥¹⁷

ब्रह्माण्ड को तोड़कर आती हुई, महादेव जटाजूट को सुशोभित करती हुई स्वर्गलोक से अवतरित होकर सुमेरु पर्वत पर पाषाणों से टकराती हई, पृथ्वी के समस्त पापों को नष्ट करती हुए समुद्र में मिलनेवाली यह दिव्य नदी हम सबको पवित्र करें।

ऐतरेय ब्राह्मण में जल के दिव्य प्रकार आन्तिरक्ष जल का वर्णन करते हुए बताया गया है कि सूर्य, जिसे मारीचि कहा जाता है, यह संपूर्ण अतिरक्ष में व्याप्त आन्तिरक्ष अप् है, जो सूर्य की किरणों के परस्पर रगड़ से प्रादुर्भूत होता है इसे 'यमुना' नाम दिया जाता है। अतएव यमुना सूर्य-िकरणों से उत्पन होने के कारण सूर्यपुत्री भी कही जाती है। वैदिक वाङ्मय में गंगा को दिव्य जल ओर यमुना को आन्तिरक्ष जल तथा अन्य समस्त निदयों के जल को पार्थिव जल के अन्तर्गत माना गया है।

ऋग्वेद के दशम मण्डल के 75वें सूक्त का नाम नदीसूक्त है। इसमें जगती छन्द में 9 मन्त्र हैं, और इसके ऋषि हैं- प्रियमेध पुत्र सिन्धुक्षित। इस सूक्त में जल से परिपूर्ण अनेक नदियों का नाम बताया गया है। इसके पाँचवें मन्त्र में सिन्धु के पूर्वी तट की नदियों के नाम आये हैं और छठे मन्त्र में सिन्धु तथा उसकी पश्चिम सीमा वाली नदियों के नाम हैं। वैदिक साहित्य में इन नदियों के नाम पाये जाते हैं- अंशुमती, अंजसी, अनितभा, असिक्नी, आपया, आर्जीकिया, कुभा, कुलिशी, कुमु, गंगा, गौमती, जह्नावी, तृष्टामा, दृषद्वती, परुष्णी, मरुद्रूधा, मेहलू, यमुना, यव्यावती, रथस्या, रसा, वरणावती, वितस्ता, विपशा, विबाली, वीरपत्नी, शिफा, शुतुद्री, श्वेत्या, सदानीरा, सरयू, सरस्वती, सिन्धु, सुदामा, सुवास्तु सुषोमा, सुसर्त्तु, और हरियूपीया।

भारतीय साहित्य में गंगा के जल को अपर ब्रह्माण्ड की जलधारा कहा गया है। गंगा को पुराणों में हजारों वर्ष तक इसका विष्णुपद शिवजटा आदि में रहना लिखा है। विष्णुपुराण में कहा गया है

वामपादाम्बुजाङ्गुष्ठनखस्त्रोतोविनिर्गताम् । विष्णोर्बिभार्ति यां भक्त्या शिरसाहर्निशं ध्रुवः॥

ततः सप्तर्षयो यस्याः प्राणायामपरा यणाः। तिष्ठन्ति वीचिमालाभिरुह्यमानजटाजले॥¹⁸

हमारे ऋषि-महर्षियों ने अपनी खोज के आधार पर गंगाजल को इसके विशिष्ट गुणों के आधार पर अलौकिक दिव्यजल माना था। महाभारत के भीष्मपर्व में बताया गया है कि-

तस्य शैलस्य शिखरात्क्षीरधारा नरेश्वर। विश्वरूपाऽपरिमिता भीमनिर्घातनिःस्वना॥28॥

15. ऋग्वेद, 10.75.5

16. 苯. 1.23.22

17. वाल्मीकि, गङ्गाष्टकम्, श्लोक 3

18. विष्णुपुराण अ.2.8.109-110

पुण्या पुण्यतमैर्जुष्टा गङ्गा भागीरथी शुभा।
प्लवन्तीव प्रवेगेन हृदे चन्द्रमसः शुभे॥29॥
तया ह्युत्पादितः पुण्यः सहदः सागरोपमः।
तां धारयामास तदा दुर्धरां पर्वतैरिप॥30
शतं वर्षसहस्राणां शिरसैव महेश्वरः॥3॥क¹९

शास्त्रों में गंगा स्नान करनेवाले को पद-पद में अश्वमेध राजसूय आदि का फल बताया गया है।

इस प्रकार वैदिक आयों ने जल के विशिष्ट महत्त्व को जान लिया था। वैदिक वाङ्मय में "सर्वमापोमयं जगत्" कहकर इसके महत्त्व को स्वीकारा है। जल से उत्पन्न होने के कारण ही पृथिवी को पृष्करपर्ण कहा जाता है।

इस प्रकार हमारे जीवन के लिए प्रकृति ने हमें जल के रूप में जिस अमृत की रचना की है, उसकी महिमा का वर्णन हम वैदिक काल से ही करते रहे हैं। जल के जितने भी स्नोत हैं, उनके प्रति हमारी परम आस्था रही है। उन आस्थाओं के लोप होने से हम उसके प्रति अपनी कर्तव्य-भावना को भूल चुके है और जल को एक रासायनिक संरचना मानकर भौतिकवाद के दलदल में फँसते जा रहे हैं।

19 महाभारत भीष्मपर्व, जम्बूखण्ड निर्माण, अध्याय. 6. 28-31

लेखकों से निवेदन

'धर्मायण' का श्रावण, 2078 का अंक ब्रह्मा-विशेषांक के रूप में प्रस्तावित है। इसके लिए दिनांक 16 जून, 2021 तक विद्वत्तापूर्ण आलेख आमन्त्रित हैं। त्रिदेवों में ब्रह्मा आदि हैं। इन्हें जगत् का उत्पत्तिकर्ता कहा गया है। वैदिक काल में यज्ञ में ब्रह्मा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे यज्ञ के निरीक्षक तथा अग्नि के संरक्षक कहे गये हैं। वाक् एवं मनस् के बीच विवाद होता है तो वे इन्ही के पास जाती हैं। पुराणों में भी प्रजापित के रूप में उनका उल्लेख हुआ है। साथ ही, जब वे निर्जीव सृष्टि करने लगते हैं तो ब्रह्मा ही विश्वकर्मा बन जाते हैं, अतः दोनों के नाम त्वष्टा, विश्वसृज् आदि समान हैं। हर्षचरित में बाणभट्ट ने सरस्वती के पित के रूप में इनका वर्णन किया है। लेकिन वर्तमान में ब्रह्मा की छिव को लेकर अनेक प्रकार के जो आरोप लगाये जा रहे हैं उनका कितना तक औचित्य है, वास्तविकता क्या है, इसकी विवेचना हेतु विद्वान् लेखकों की दृष्टि का संकलन यहाँ प्रस्तावित है।

वर्तमान अंक में व्यवहृत सन्दर्भ की शैली में लिखित सन्दर्भ के साथ शोधपरक आलेखों का प्रकाशन किया जायेगा। अपना टंकित अथवा हस्तलिखित आलेख हमारे ईमेल dharma-yanhIndl@gmall.com पर अथवा ह्वाट्सएप सं- +91 9334468400 पर भेज सकते हैं। प्रकाशित आलेखों के लिए पत्रिका की ओर से पत्र-पुष्प की भी व्यवस्था है।